ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 152-154

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

आधुनिक संस्कृत उपन्यासों में विश्व-बन्धुत्व

सुषमा तिवारी

शोध अध्येत्री–संस्कृत विभाग– बी0आर0डी0बी0डी0 पी0जी0 कालेज, आश्रम बरहज देवरिया, (उ0प्र0) भारत

Received-15.06.2022, Revised-20.06.2022, Accepted-25.06.2022 E-mail: sushamatiwari274601@gmail.com

सारांशः – *साहित्य शब्द सहित् से बना है। सहित् का एक भाव यह है कि जहाँ षब्द और अर्थ एक साथ हो वहाँ साहित्य है। काव्यशास्त्री दृष्टिकोण से इसकी बहुत विस्तृत व्याख्या और समीक्षा की जा सकती है। जो यहाँ प्रासंगिक नहीं है। सहित् का एक दूसरा अर्थ भी निकलता है, स+हित, अर्थात् जहाँ हित का भाव हो। उल्लेखनीय है कि इस दूसरे अर्थ में साहित्य का मूल प्रयोजन स्पष्ट हो जाता है। इससे यह ध्वनित होता है कि संस्कृत साहित्य का मूल प्रयोजन भी सर्वहित, सर्वव्यापक, अथवा विश्व बन्धुत्व है।*

वैदिक साहित्य से लेकर लौकिक संस्कृत साहित्य में आधुनिक काल तक रचना की प्रत्येक विधा और प्रत्येक स्तर पर विश्वबन्धुत्व की अवधारणा दिखाई पड़ती है। यह निर्विवाद है कि विश्व का प्राचीनतम् ग्रन्थ ऋग्वेद है। ऋग्वेद में विश्व–बन्धुत्व से सम्बन्धित भाव जगह–जगह मिलते है। बन्धु शब्द (बन्ध्+उ) से बना है। बन्धु में त्वल् प्रत्यय लगाकर बन्धुत्व शब्द निर्मित इस प्रसंग में उल्लेखनीय है कि बन्ध् धातु बाधने, कसने, जकड़ने रोकने स्थिर करने आदि अर्थों में आती है।

कुंजीभूत शब्द– काव्यशास्त्री, विस्तृत व्याख्या, समीक्षा, प्रासंगिक, मूल प्रयोजन, ध्वनित, संस्कृत साहित्य, मूल प्रयोजन।

वामन शिवराम आप्टे ने – अपने शब्द कोश में बन्धु शब्द के अनेक अर्थ दिये है। यथा– बान्धव, सम्बन्धी, भाई, सहयात्री, मित्र, पिता, माता, भ्राता आदि।[1]

इससे यह स्पष्ट है कि परस्पर अपनापन, सौहार्द, त्यागमय, बन्धन, कल्याण, कामना, शुभकामना, परस्पर सहयोग आदि का जहाँ भाव हो वहाँ बन्धुत्व होता है। इस संदर्भ में बन्धु षब्द के प्रयोग से सम्बन्धित ऋग्वेद का मंत्र उल्लेखनीय है।[2] जहाँ विष्णु के परमलोक में कल्याणकारी मधु का स्रोत है।

इसी प्रकार यदि अन्वेषण किया जाये तो ऋग्वेद संहिता के अतिरिक्त अन्य, संहिताओं, ब्राह्मण ग्रन्थों, आरण्यकों और उपनिषदों में भी बन्धुत्व से सम्बन्धित अनेक प्रसंग प्रयुक्त है।

वैदिक वाङ्मय में प्रस्तुत बन्धुतव की अवधारणा निरन्तर आगे बढ़ती हुई दिखाई पड़ती है। पुराणों, महाकाव्यों, रूपकों, गद्य के अनेक भेदों से आगे बढ़ती हुई दिखाई पड़ती है। उल्लेखनीय है कि, प्राचीन काल में महाकवि वाल्मीकि ने भी बन्धु एवं बान्धव शब्द का प्रयोग और भाव प्रकट किया है।[3]

महाकवि कालिदास ने तो न केवल मनुष्यों अपितु पशु–पक्षियों तथा जड़ जगत के प्रति भी बन्धुता का भाव प्रकट किया है।[4]

इसी प्रकार महाकवि भारवि ने किरातार्जूनीयम् में दुर्योधन के व्यवहार में बन्धुता का भाव वर्णित किया है।[5]

इसी प्रकार बाणभट्ट रचनाओं–कादम्बरी, हर्षचरितम् में भी इस भाव को पर्याप्त दर्शन होते है।

संस्कृत साहित्य में उपन्यास – उपन्यास विधा संस्कृत साहित्य में नवीन विधा है या नहीं इस पर विद्वानों में मतभेद है। देवर्षि कलानाथ शास्त्री कहते है – जिस प्रकार कथा साहित्य के प्राचीनतम् उत्स (पञ्चतन्त्रादि) भारत में खोजे गये उसी प्रकार उपन्यास विधा का उत्स लगभग एक हजार वर्षों से किसी न किसी रूप में भारत में उपलब्ध होता है। सुबन्धु की 'वासवदत्ता', बाणभट्ट की 'कादम्बरी' तत्वतः उपन्यास ही है। हो सकता है कि उसमें आज के उपन्यास के तथाकथित तत्वों (जैसे–कथावस्तु पात्र और चरित्र–चित्रण, कथोपकथन तथा षैली आदि) में कुछ तत्व उस रूप में विद्यमान न हो जिस प्रकार के आज के उपन्यासों में हम पाते हैं।[6]

कुछ समीक्षक उपन्यास विधा का प्रारम्भ पण्डित अम्बिकादत्त व्यास के 'शिवराजविजय' से मानते है और व्यास जी को संस्कृत का प्रथम उपन्यासकार। यथा – अंग्रेजी साहित्य के सम्पर्क से पहले बंग्ला भाषा तत्पश्चात् हिन्दी भाषा में उपन्यास लेखन प्रारम्भ हुआ। सतत् पराधीनता के उस युग में व्यास जी ने संस्कृत साहित्य में उपन्यास नामक नयी विधा लिखकर भावी पीढ़ी के लेखकों के सामने उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में अपनी कृति प्रस्तुत की।

बांग्ला, गुजराती, हिन्दी आधुनिक भारतीय भाषाओं में उपन्यासों की भरमार होने पर भी संस्कृतज्ञों द्वारा ध्यान ने देने पर व्यास जी स्वयं इस क्षति को पूर्ण करने एवं दूसरों को इस प्रकार की गद्य रचना के लिए प्रेरणा देते हुए शिवराजविजय नामक उपन्यास की रचना की।[7]

निष्कर्षतः उपन्यास विधा संस्कृत साहित्य के इतिहासों में सर्वथा एक नवीन विधा है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

काव्य नाटक, आख्यायिका आदि प्रत्यक्ष रूप से नहीं मिलती है। संस्कृत साहित्य के लक्षण ग्रन्थों में उपन्यास शब्दों का प्रयोग अवश्य उपलब्ध होता है, किन्तु यहाँ नाटक की प्रतिमुख सन्धि के अवान्तर भेद के रूप में ही होता है।

उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति – उपन्यास शब्द उप और निःउपसर्ग पूर्वक अस् धातु से धञ् प्रत्ययन करने पर निष्पन्न हुआ है। उप् अर्थात् निकट नि+अस्+धञ्+न्यास अर्थात् धरोहर या अमानत। उप+न्यास = उपन्यास जिसका अर्थ है मनुष्य के निकट रखी गयी वस्तु। उपन्यास दो शब्दों के योग से बना है – उप= समीप, निकट और न्यास = रखना या उपस्थित करना।[8]

उपन्यास शब्द का अर्थ – प्राचीन संस्कृत साहित्य में उपन्यास शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है। इस अनेकार्थक शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में दृष्टिगोचर होता है। वहाँ नाट्य संधियों के प्रतिमुख सन्धि के उपभेद के रूप में उस शब्द का प्रयोग किया गया है। यथा– प्रसन्न करने, आनन्दित करने को उपन्यास कहते है।

''उपन्यासस्तु प्रसादनम्'' अथवा

''उपपति कृतों ह्मर्थः उपन्यासः प्रकीर्तितः।''[9]

धनन्जय ने भी – इस शब्द का प्रयोग प्रतिमुख संधि के अंग के रूप में ही स्वीकार किया है। यथा – उपापयुक्त या हेतु प्रदर्शक वाक्य उपन्यास कहलाता है।

''उपन्यासस्तु सोपायम्''[10]

इसके अतिरिक्त किसी पक्ष को प्रस्तुत करने हेतु समान्यतया उपन्यास शब्द प्रयुक्त होता है। यथा– अमरूक कवि की उद्धृत पद्य की पंक्ति द्रष्टव्य है –

''निर्यातः शनकैरलीकवचनोपन्यासमालीजनः।''[11]

मनु के अनुसार – कहीं–कहीं विचारों की प्रस्तुति और काव्यात्मक प्रतिवेदन के अर्थ में उपन्यास शब्द का प्रयोग किया जाता है।

''विश्वनजयमिमं पुण्यमुपन्यासं निबोधत।''[12]

कालिदास ने – अभिज्ञानशाकुन्तलम् में उपन्यास शब्द का प्रयोग किया है।

''किमिवमुपन्यस्तम् षकुन्तला आत्मगतम् पावकः खलु वचनोपन्यासः।''[13]

आधुनिक संस्कृत उपन्यासों एवं उपन्यासकारों के नाम उल्लेखनीय है –

1	भागीरथी प्रसाद त्रिपाठी	2	मंगलमयुख 1956
3	त्रिपुरदाह कथा 1959	4	प्रो0 रामस्वरूप शास्त्री
5	श्री निवास शास्त्री	6	चन्द्रमहीपतिः 1959
7	देवर्षि कलानाथ शास्त्री	8	संस्कृतोपासिकायाः आत्मकथा 1960
9	आनन्द रत्न पारखी	10	कुसुम लक्ष्मी 1960–61
11	डॉ0 रामजी उपाध्याय	12	द्वा सुपर्णा 1960
13	शंकरलाल नागर	14	चन्द्रप्रभा चरितम् 1962
15	सूर्यप्रभा किं वा वैभवपिशाचः 1968	16	कृष्णतारा 1968
17	जीवितोऽपि प्रेतभोजनम् 1970	18	डॉ0 बिहारीलाल शर्मा
19	मंगलायतनम्	20	डॉ0 केशवचन्द्र दास
21	तिलोत्तमा 1980	22	द्वारिका प्रसाद शास्त्री
23	दिव्यज्योतिः 1982	24	श्रीनाथ शास्त्री हसूरकर
25	सिन्धुकन्या 1982	26	कृष्ण कुमार
27	उदयन चरितम् 1982	28	प्रतिज्ञापूर्तिः 1983
29	शीतलतृष्णा 1983	30	अजातशत्रुः 1984

इन उपन्यासों के गहन अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अनेक उपन्यासकारों ने प्राचीनकाल से चली आ रही विश्वबन्धुत्व की भावना को आगे बढ़ाने का प्रयास किया है। वैश्विक स्तर पर विविध समस्याओं का प्रस्तुतिकरण तथा उनके समाधान का प्रयास इन उपन्यासों में मिलता है। इसमें बहुत सी समस्यायें राष्ट्रीय स्तर पर और बहुत वैश्विक स्तर पर है। इन उपन्यासों में यह प्रयास किया गया हैं कि भारतीय परम्परागत मूल्यों की पृष्ठभूमि में समूचे विश्व में शान्ति स्थापना हो, तथा परस्पर कल्याण भाव हो। युद्ध की विभीसिका से बचने के उपाय प्रस्तुत करने के प्रयास किये गये हैं।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

आधुनिक जनजीवन यांत्रिकता से अत्यधिक प्रभावित हो गया। मशीनीकरण और यांत्रिकता के वश में होकर आज मनुष्य यंत्रों का दास बन गया है। आधुनिक जीवन मशीनों की भाँति चल रहा है। उसकी मानवीय भावनाएँ शुष्क हो गयी हैं। चिकित्सा के क्षेत्र में जीवन रक्षापरक औषधियों का निर्माण और जीवन को सुखी बनाने के लिए विध्वसंक उपकरणों का अविष्काार होता जा रहा है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति राष्ट्र अथवा सम्पूर्ण विश्व सुरक्षित नहीं है।

रयीशः उपन्यास में इस तरह का भाव प्रकट किया गया है। इसका समाधान विश्वबन्धुत्व की भाव में ही है। गुहावासी उपन्यास में पशुओं के आत्मसुरक्षा का प्रसंग प्रस्तुत हैं[14] –

केचिद् अधिकारवंचिताः समाजिकानादरभवेन परिपीडिताश्च
भूत्वा हलाहल–पापेन नाशयन्ति स्वकीयान्। अमूल्यं कतिचिदात्मानम् जलेषु
निमज्ज्य चिरकालाय स्वपन्ति। केचिद्यानचक्राणधस्तात् चूर्णयन्ति देह पंजरम्।
केचिद् पर्वतेभ्यः केचिद् वृक्षेभ्यः पातयित्वात्मानं स्वजीवनं परित्यजन्ति। वसुन्धरायानश्चरणयोः
प्राणप्रसुनैः पूजामिवैते कुर्वन्ति। बह्वयोः, महिलाः, शिशुन्, क्रोडेकुपेषु, नदीषु सरोवरेषु
च सम्पतन्ति। नश्यति मानवकल्पतरू, करम्बिंत नन्दनवननाभिदम्। जातं च कुटिल
कण्टकाकीर्ण जनजीवनम्। दग्धह्रदये दारूण ज्वाला निर्दहति। नेत्रयोश्च वारिधारा
प्रवह्रत्यजस्त्रम इदमेव भारतीयानां युवकानां जीवन दर्शनम्। शोषण–पीडनस्य
विभीशिकापीयमेव। इयमेवास्ति व्यवस्था जनसमाजस्य।[15]

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि वैदिक काल से चली आ रही विश्वबन्धुत्व की भावना को आधुनिक संस्कृत उपन्यासकारों ने भी आगे बढ़ाने का प्रयास किया है। विश्व की समस्याओं के समाधान एवं बन्धुता का भाव प्रस्तुत करने में आधुनिक संस्कृत उपन्यासकारों का योगदान महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. संस्कृत हिन्दी कोश – (वामन शिवराम आप्टे), पृ0 706.
2. तदस्य प्रियमाभि पाथो अस्या, नरो यत्र देवयवो भदन्ति। उरूक्रमस्य स हि बन्धुरित्था, विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः।। ऋग्वेद–1.154.5.
3. देशे–देशे कलत्राणि देशे–देशे च बान्धवा न तु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः।। – वाल्मीकि रामायण।
4. अनुमतगमना शकुन्तला, तरूभिरियं वनवास बन्धुभिः। परभृतविरूतं कलं यथा, प्रतिवचनीकृतमेभिरीदृशम्।। – अभिज्ञानशकुन्तलम्–4.10.
5. सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनः समानमानान् सुह्रदश्च बन्धुभिः। स संततं दर्शयते गतस्मयः कृताधिपत्यामिवसाधु बन्धुताम्।। – किरातार्जुनीयम (प्रथम सर्ग–10)।
6. संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास, पृ0 284.
7. अम्बिकादत्त व्यास व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ0 39.
8. दृक् अंक 22, पृ0 101.
9. संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास (सप्तम खण्ड), पृ0 441.
10. दशरूपक–1.35.
11. अमरूशतकम–23वाँ श्लोक।
12. मनुस्मृति, 9.31.
13. अभिज्ञानशाकुन्तलम् अंक–5, पृ0 222 (उमेशचन्द्र पाण्डेय)।
14. चिन्तयतु तावद् भावेन कियत्कष्टबहुलं पौरूषापेक्षं चाभूदस्मत्पूर्व पुरुषजीवितम्। – गुहावासी, पृ0 18.
15. प्राचीन भारत की राजनीति एवं संस्कृति, पृ0 71.

*****